RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-02
Issue-10
October-2017

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com

मीडिया की चाल, चरित्र और चेहरे का विश्लेषण

[1]Naveen Pal and [2]Dr. Bhupendra Singh Raghuvansi

[1]Research Scholar, Mass Comm, OPJS University-Churu Rajasthan
[2]Research Guide, Assistant Professor-Mass Comm(OPJS University-Churu Rajasthan

ARTICLE DETAILS

Article History
Received: 02 Oct 2017
Accepted: 20 Oct 2017
Published Online: 30 Oct 2017

Keywords
मीडिया, ई–समाचारपत्र, कंप्यूटर, संचार, वेब डिजाइनिंग, नया माध्यम

ABSTRACT

ई–समाचारपत्रों का मुखपृष्ठ केवल समाचारों के लिंक प्रदान करने वाले पृष्ठ की भूमिका निभाता है। विस्तृत समाचारों को मुखपृष्ठ पर कोई स्थान नहीं दिया जाता है। नये माध्यम ने जिस चमत्कारिक ढंग से पूरे मीडिया परिदृश्य को प्रभावित किया है, पूरी दुनिया में विद्वानों ने इसे मीडिया के भविष्य के रूप में स्वीकार करना आरंभ कर दिया है। भारत में पिछले एक दशक के दौरान ऑनलाइन पत्रकारिता ने अपनी मजबूत पहचान बनाई है। एक तरफ, इंटरनेट का विस्तार तेजी से हो रहा है तो दूसरी तरफ, भारतीय ई–समाचारपत्र निरंतर अपनी बनावट और सामग्री को बेहतर बना रहे हैं जबकि शिक्षण संस्थानों में इस विषय पर शोध अभी शैशवावस्था में है। ई–समाचारपत्रों के आरंभ से ही पश्चिम में इनकी विशेषताओं और स्वरूप पर शोध आरंभ हो चुके थे। ये शोध इनकी प्रसार संख्या बढ़ाने और मौलिक बिजनेस मॉडल को विकसित करने, पाठक अनुकूल डिजाइनिंग और इंटरएक्टिविटी को जांचने तथा ई–समाचारपत्रों की अंतर्वस्तु का विश्लेषण करने के दृष्टिकोण से हुए है। एशियाई देश चीन, जापान, दक्षिण कोरिया भी ई–समाचारपत्रों से जुड़ी शोध में पीछे नहीं रहे।

1.1 पूर्व पीठिका

परिवर्तन प्रकृति का नियम है। यह परिवर्तन समय सापेक्ष एवं निरपेक्ष, अनुकूल या प्रतिकूल अथवा सकारात्मक या नकारात्मक किसी भी रूप में हो सकता है। मीडिया के रूप–स्वरूप, गुण एवं तकनीक में समय के साथ परिवर्तन होता रहा है। समकालीन मीडिया में यह बदलाव बहुत तेजी से हुआ है। समकालीन मीडिया के स्वरूपगत परिवर्तन को समझने के लिए इसके अतीत की जांच–पड़ताल आवश्यक है। रामशरण जोशी ने अपनी पुस्तक 'मीडिया मिशन से बाजारीकरण तक' में लिखा है– ''भारतीय पत्रकारिता के चाल चलन और चेहरे में गुणात्मक बदलाव कैसे होते गये इसकी संक्षिप्त पड़ताल उपयोगी रहेगी। आज जब पत्रकारिता में बार–बार मिशनहीनता, प्रतिबद्धता का अभाव, दिशाहीनता, सरोकारहीनता, कुलीनीकरण, प्रोडक्टिकरण, बाजारवाद जैसी प्रवृत्तियों के वर्चस्व का विलाप किया जाता है तब हम यह भूल जाते हैं कि ऐसी शक्तियों के उदय की पड़ताल ऐतिहासिक परिप्रेक्ष में की जानी चाहिए। क्योंकि नई प्रवृत्तियों के वर्चस्व की जड़ें केवल वर्तमान में ही नहीं बल्कि विगत में भी हैं। इन प्रवृत्तियों का विस्फोट सहसा नहीं हुआ है। एक निश्चित प्रकिया से गुजरने के बाद ही यह स्थिति पैदा हुई है।'' इसका मतलब यह हुआ कि वर्तमान समय में मीडिया में दिखाई देने वाली नकारात्मक प्रवृत्तियां उस रूप में नहीं हैं जिस रूप में बताई जाती हैं। लेकिन ऐसा है नहीं। समकालीन मीडिया में विचलन की स्थिति है और कहीं न कहीं वह अपने सरोकारों से अलग भी हुई है। भारत में पत्रकारिता की शुरुआत अंग्रेजी शासन के समय हुई। उस समय पत्रकारिता का रूप रंग कुछ अलग था। अंग्रेजों के खिलाफ देशवासियों को एकजुट करना तथा अंग्रेजों की नीतियों से समाज को अवगत कराना उनका मुख्य लक्ष्य था। समाज सुधार भी उनके मुख्य लक्ष्य में था। अंग्रेजी शासन के दौर में देश में आधुनिकता का उदय हुआ। आधुनिकता अब जागृति की वजह से फैली। विसंगतियों, कुरीतियों, आडम्बरों आदि से समाज को मुक्त कराने में पत्रकारिता ने अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया।

मीडिया का मुख्य कार्य सूचना देना और लोगों को शिक्षित करना है। अपनी बात को एक ही समय में एक बड़े भू–भाग तक फैलाने में मीडिया सक्षम है। उन्नीसवीं शताब्दी में मीडिया बहुत सीमित साधनों में कार्य करता था। उस दौर के पत्रकारों ने सामाजिक–सांस्कृतिक आंदोलनों का समर्थन किया और भारत की दीन–हीन स्थिति के बारे में लोगों का ध्यान आकृष्ट किया। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद मीडिया का स्वरूप परिवर्तित हुआ। सामाजिक समानता एवं विकास की चुनौतियों से उसका सामना हुआ, जिसका सामना तत्कालीन पत्रकारिता ने किया। लेकिन इस दौर में मीडिया मिशन से प्रोफेशन में बदलने लगी। बीसवीं शताब्दी के अंतिम दशक में भूमण्डलीकरण और उदारीकरण के कारण मीडिया का तेजी से विकास हुआ। वह तकनीकी रूप से बहुत सक्षम होता गया। अब मीडिया प्रेस तक सीमित नहीं रहा, बल्कि वह रेडियो से आगे बढ़कर टीवी तक विस्तृत हो गया। रामशरण जोशी ने लिखा हैं– ''करीब दो दशक पहले तक मीडिया शब्द प्रचलित नहीं हुआ था। इसके स्थान पर प्रेस शब्द का प्रयोग हुआ करता था। मुद्रण माध्यम अर्थात पत्र–पत्रिकाएं ही भारतीय पत्रकारिता की मुख्य धारा हुआ करती थी। अठारहवीं सदी के उत्तरार्ध से भारतीय पत्रकारिता की शुरुआत (1780 बंगाल गजट) मानी जाती है। भारतीय पत्रकारिता ने अपने दो सौ चालीस साल के सफर में कई वैचारिक, सांस्थानिक, आर्थिक व राजनीतिक और प्रौद्योगिकी की चुनौतियों का सामना किया है। यह कई बार अपने पथ से विचलित हुई है और कई बार सत्ता के समक्ष दृढ़ता का भी परिचय दिया है। आज यह प्रेस से मीडिया में रूपांतरित हो चुकी है। इसकी वजह यह है कि अब यह बहुआयामी बन चुकी है। छठे दशक के मध्य तक जहां यह एक आयामी (मुद्रण माध्यम) थी, वहीं आज इसका रूप चार आयामी (रेडियो, न्यूज चैनल्स, इंटरनेट और

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

मुद्रण) बन गया है। इसके आलावा केबल–नेटवर्क की भी अलग से पत्रकारिता धीरे–धीरे अस्तित्व में आती जा रही है। कई अखबार समूह अपने स्वतंत्र चैनल व केबल (इनाडु, जागरण, भास्कर, पत्रिका आदि) चला रहे हैं। टाइम्स ऑफ इंडिया भी इस क्षेत्र में पीछे नहीं है।

भारतीय पत्रकारिता में परिवर्तन नौवें दशक के बाद ही आया। इसमें कंप्यूटर क्रांति, बाजार की प्रतिस्पर्धा और नवउदारवादी नीतियों ने एक अहम भूमिका निभाई जिससे देश में नए–नए टी.वी. चैनलों और रेडियो स्टेशनों की बाढ़ सी आ गई। यही नहीं, बड़े स्तर पर निजी संस्थानों में मीडिया अध्ययन और अध्यापन कार्य होने लगे और देश भर में कई प्रशिक्षण संस्थान खुलने लगे। मीडिया के विकास और विस्फोट के लिहाज से वैश्वीकरण का सबसे सार्थक रूप है जिसमें सारे देश में पत्रकारिता और फिल्मों को मीडिया का पर्याय समझने की अवधारणा बदलने लगी। ना सिर्फ अवधारणा बदली, साथ ही मीडिया अध्ययन–अध्यापन की ओर भी विशेष ध्यान दिया जाने लगा। भूमण्डलीकरण की दृष्टि से 90 के इस दशक की मुख्य भूमिका रही। रामशरण जोशी ने अपने लेख 'आधुनिक मीडिया और वस्तुकरण' में लिखा है ''आज इसका (मीडिया) रूप चार आयामी (रेडियो, न्यूज चैनल्स, इंटरनेट) बन गया है। इन टीवी चैनलों के आने के साथ ही देश में केबल नेटवर्को के द्वारा विभिन्न चैलनों का प्रसारण शुरू हो गया था। केबल नेटवर्क के आ जाने से मनोरंजन कार्यक्रम, शिक्षाप्रद कार्यक्रम एवं दूरदर्शन पर समाचार प्रसारण के कार्यक्रमों के अलावा उत्पादन बिक्री के लिए व्यवसायिक प्रचार से सम्बंधित छोटी–छोटी प्रचार फिल्मों का निर्माण एवं प्रसारण शुरू हुआ। यह बाद में चलकर एड एजेंसी या एड उद्योग के रूप में स्थापित हो गया और पूरे देश को बाजार के रूप में प्रस्तुत कर दिया। एड फिल्मों ने मीडिया को व्यवसाय और व्यवसाय को उद्योग के रूप में परिवर्तित कर दिया।

1.2 जनतंत्र और मीडिया

आधुनिक युग की सबसे बड़ी उपलब्धि है जनतंत्र। जनतंत्र के बिना सामाजिक, राजनीतिक सांस्कृतिक और मीडिया के विकास की परिकल्पना संभव नहीं है। क्योंकि जनतंत्र आधुनिक नजरिये की प्राण वायु है और जनतांत्रिक व्यवस्था में ही सबको समान अवसर व अधिकार मिल पाता है। समाजवादी हों या साम्यवादी, उदार हों या अनुदार, फंडामेंटलिस्ट हो या आतंकवादी, कट्टरपंथी हो या बुर्जुवा, सभी के लिये जनतंत्र में जगह है। इसी अर्थ में जनतंत्र सबका है। सभी वर्गों और समुदाय के लोग इसमें जी सकते हैं और प्रतिस्पर्धा करके विकास कर सकते हैं। जगदीश चतुर्वेदी और सुधा सिंह ने अपनी पुस्तक 'वैकल्पिक मीडियाः लोकतंत्र और नॉम चोम्स्की' में लिखा है– "लोकतंत्र विचार है, मूल्य है, संस्थान है और एक व्यवस्था भी है। लोकतंत्र एकायामी नहीं होता, बहुआयामी होता है। लोकतंत्र के एक नहीं बहुत अर्थ हैं। लोकतंत्र के लिए कोई भी अछूत नहीं है, इसमें भेद है और भेद को यह खत्म नहीं करता। भेद सामाजिक ऐतिहासिक वास्तविकता है। लोकतंत्र अर्जित ऐतिहासिक वास्तविकताओं को, सकारात्मक उपलब्धियों को सहेजता है उनका विकास करता है। जनतांत्रिक वातावरण में जब कोई वस्तु या विचार या तकनीक या संस्थान जन्म लेता है और व्यवहार में उसका इस्तेमाल होने लगता है तो उसका लोप नहीं होता। जनतंत्र में लोप घृणा का पात्र है इसमें संचय और सामंजस्य का भाव है। जनतंत्र में हाशिये बनाये रखने अथवा हाशिये पर फेंक देने या गौण बना देने की आदत है। लोकतंत्र में हाशिये होंगे, हाशिये की आवाजें और हाशिये पर जीने वाले सामाजिक समुदाय अथवा वर्ग भी होंगे।" जनतंत्र में जो महत्व विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका का है वही महत्व मीडिया का भी है। लोकतंत्र का चौथा स्तंभ कहलाने वाली पत्रकारिता आज कई तरह के प्रश्नों और आशंकाओं से घिरी दिखायी देती है। निजी टीवी चैनलों के आगमन और उनके चहुंमुखी विस्तार के बाद पत्रकारिता का नाम मीडिया के रूप में हो गया और आज यही मीडिया अत्यंत सशक्त और प्रभावशाली बन चुका है। कभी–कभी तो इसकी शक्ति भय पैदा करने लगती है। इसकी अपार शक्ति ही लोकतंत्र के स्वास्थ्य की दृष्टि से कमजोर साबित हो रही है। आज मीडिया विशेषकर टेलीविजन जनता को सूचना देने और जागरूक करने के अपने मूल उद्देश्य से लगातार दूर होता जा रहा है और एक व्यापार या व्यवसाय में बदल गया है।

प्रो. आनंद कुमार ने एक साक्षात्कार में कहा है– "आधुनिक समाज के निर्माण में लोकतंत्र, बाजार का विस्तार एवं मीडिया का विस्तार तीनों एक दूसरे से जुड़ी हुई प्रकिया हैं। लोकतंत्र, मीडिया और बाजार में परस्पर सहयोग और समन्वय का संबंध है। बाजार में निहित प्रतियोगिता के कारण उपभोक्ता के रूप में बाजार एक अच्छा विकल्प देने की गारंटी भी देता है लेकिन अगर मीडिया में, बाजार में बिकने वाली चीजों और बाजार के द्वारा लोगों पर अपना वर्चस्व जमाने वाले वर्गों का ही बोल बाला हो जाए तो फिर मीडिया और बाजार का रिश्ता एक तरह से बकरी और शेर का रिश्ता हो जायेगा जिसमें बाजार मीडिया को दबोच लेगा।'' अगर लोकतंत्र निर्माण और राष्ट्रीय विकास के बजाय मुनाफा, अंतर्राष्ट्रीय पूंजी संचार का नियंत्रण एवं पैसे के आधार पर सूचना संचार और विश्लेषण प्रस्तुत करना ये तीनों एक साथ हो जाएं तो फिर मीडिया समाज के लिए एक खतरनाक व्यवसाय हो जाएगा। तब हम सूचना शक्ति एवं तथ्यात्मक विश्लेषण के स्रोत के रूप में मीडिया का जो पारम्परिक सम्मान है वह नहीं कर पाएंगे, लेकिन पूंजीवाद के समर्थकों के लिए एवं समाजवादी व्यवस्था के विरोधियों के लिये जो बात चौंकाने वाली है वह यह है कि मीडिया स्वस्थ पूंजीवाद के विकास में रोड़ा है। आज लोकतंत्र का चौथा मजबूत स्तंभ अपने मूल उद्देश्यों को छोड़कर वह सब करने को तैयार है जिससे वह ज्यादा से ज्यादा मुनाफा कमा सके। खबर को इस तरह से प्रकाशित या प्रसारित करना अभीष्ट है कि वह जनता के बीच कौतूहल का विषय बनकर उन्हें अपनी ओर आकर्षित करे। मीडिया इसे बखूबी जान चुका है। इस खूबी के चलते मीडिया ने पूंजी के साथ–साथ खूब आलोचनाएं भी बटोरी है। कभी झूठी खबरों का प्रसारण कर तो कभी पेड न्यूज चलाकर मीडिया ने अपने उद्देश्यों पर प्रश्न चिह्न लगा दिया है। इसका जीवंत उदाहरण हैं जी न्यूज टी.वी. के सम्पादक सुधीर चौधरी और समीर आहलूवालिया। वे एक खुफिया कैमरे में उस वक्त पकड़े गये जब वे जिन्दल ग्रुप के चेयरमैन और सांसद नवीन जिन्दल से उनके खिलाफ प्रसारित खबरों को बन्द करने के एवज में सौ करोड़ रुपये मांग रहे थे।

लोकतंत्र के इस मजबूत स्तंभ की नींव कहीं खोखली तो नहीं हो रही है? क्या वास्तव में वह अपने उद्देश्यों एवं कर्तव्यों का निर्वाह कर रहा है? नहीं। आज के समय में उसका उद्देश्य अत्यधिक लाभ कमाना रह गया है। अब वह खबरों के अनुचित प्रसारण या कोई

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

और हथकंडा अपनाकर पैसा कमाना चाहता है। वास्तव में यह सिर्फ एक तमाशा करने वाले मदारी की भूमिका निभा रहा है। जिसका मुख्य कार्य जनता के मध्य कौतूहल का विषय बन कर उसे अपनी ओर आकर्षित करना है। पूंजी तो उसने बटोर ली, किंतु विश्वसनीयता खो दी। कभी झूठी खबरों के प्रसारण से तो कभी आधारहीन खबरों को फैला कर न सिर्फ अपने कर्तव्य से मुख मोड़ा है बल्कि जनता के साथ नाइंसाफी की है। मीडिया का कार्य जनता के समक्ष सही या गलत को रखना है। निर्णय देना मीडिया का कार्य नहीं है, किंतु वर्तमान समय की मीडिया खबरों को निर्णायक रूप में प्रस्तुत करने लगा है। अदालती निर्णय से पहले ही कई मामलों का मीडिया ट्रायल होने लगा है। बड़े पूंजीपतियों की राष्ट्रीयकरण और सरकारीकरण के दौर में जितनी चलती थी उतनी आज भी चल रही है। पिछले दशक में मीडिया पर उदारीकरण एवं पूंजीवादी प्रवृत्तियों का जिस तरह असर हुआ है उनको देखते हुए कहा जा सकता है कि परिस्थितियां अत्यंत ही चिंताजनक नजर आती हैं। आज मीडिया में एक तरह से पैसे की एवं पैसे वालों की मनमानी चल रही है फिर इसको हम समाज या लोकतंत्र का चौथा स्तंभ मानकर कैसे आगे बढ़ सकते हैं।

लोकतंत्र की अगुवाई में अगर संचार साधन आगे चलता है, समाज में अपनी जगह बनाता है, समाज सेवा करता है और बदले में समाज उसे सेवा का पुरस्कार यानी मुनाफा देता है और बाजार, लोकतंत्र एवं मीडिया के संदर्भ में उपभोक्ताओं पाठकों, दर्शकों एवं मालिकों को विकल्प देता है तथा परस्पर स्वस्थ्य प्रतियोगिता के जरिये लगातार गुणवत्ता आधारित मीडिया संस्कृति विकसित होती है तो इन त्रिकोण के बीच हम सामाजिक, राजनीतिक संस्कृति को विकसित कर सकते हैं। इसके विपरीत लोकतंत्र मीडिया के जरिये नियंत्रित हो और मीडिया बाजार की चाकरी करे तो फिर हम बाजार के मुख्य तत्व यानी पूंजीपतियों के चाकर हो जाएं। उनकी तानाशाही चलेगी और लोग इस गलतफहमी में रहेंगे की हम पांच साल में एक बार वोट देते हैं, बहुदलीय संसदीय प्रणाली को विकसित कर चुके हैं और हमारे यहां कार्यपालिका, विधायिका और न्यायपालिका का परस्पर कार्यविभाजन है। प्रो. आनंद कुमार के अनुसार– ''ऐसा लैटिन अमेरिका और दक्षिण पूर्व एशिया में हो चुका है जहां पर उदारीकरण के दौर में सूचना को प्रवेशित किया गया, तथ्यों को छुपाया गया और पूंजीवाद तानाशाहों के गोद का खिलौना बन गया। यदि स्वस्थ्य लोकतंत्र बनाये रखना है तो हमेशा मीडिया के बल और उसकी मर्यादा को बनाये रखने के लिए बाजार की शक्तियों को हावी होने से रोकना पड़ेगा वरना मुनाफावाद बहुत दूर की नहीं देख पाता। तात्कालिक लाभ के लिए तो पूंजीपतियों और उद्योगपतियों ने हिटलर और मुसोलिनी तक का समर्थन किया था। हमारे देश में इंदिरा गांधी के आपात काल का भी समर्थन किया गया था। क्योंकि जैसे ही मीडिया में दुर्गन्ध आने लगी समाज को पता चल गया कि सब कुछ ठीक नहीं चल रहा। आज तो मीडियाकर्मियों की कलम को कोई और हाथ में ले चुका है।''

1.3 सूचना उद्योग के रूप में मीडिया

भारत में स्वतंत्रता से पहले सिर्फ प्रिंट मीडिया ही अस्तित्व में था और उसका एक सामाजिक–सांस्कृतिक और राष्ट्रीय उद्देश्य था। परन्तु आजादी के बाद पत्रकारिता में व्यावसायिकता का बोलबाला शुरू हो गया। जो बाद में चलकर पत्रकारिता एक उद्योग के रूप में परिवर्तित हो गया। बदलते दौर में भूमंडलीकरण से मीडिया में अभूतपूर्व परिवर्तन हुआ। भूमंडलीकरण, नवउदारवादी नीति और विदेशी पूंजी के निवेश में स्वतंत्रता की प्राप्ति से धीरे–धीरे मीडिया मिशन से व्यवसाय और व्यावसायिकता से उद्योग के रूप में परिवर्तित होता गया। वैश्वीकरण का मुख्य आधार बाजार है। ऐसी स्थिति में मीडिया का उससे बच पाना मुश्किल है। यही कारण है कि आज मीडिया हमें बाजार के रूप में खड़ा नजर आता है। जहां कल तक मीडिया को लोकतंत्र का चौथा स्तंभ कहा जाता था वहीं मीडिया देश के आर्थिक सम्पन्नता के मूल्यांकन का भी आधार बनता नजर आने लगा है। आज के भूमंडलीय परिदृश्य में मीडिया देश का कर्ताधर्ता बन बैठा है। आज के मीडिया प्रतिष्ठानों का हर मामले में इस तरह से हस्तक्षेप हो गया है जैसे देश को चलाने का जिम्मा सिर्फ मीडिया का है। मीडिया अपना काम भूल कर बाजार की चपेट में आ चुका है। रामशरण जोशी ने लिखा है– "विगत डेढ़–दो दशक में मीडिया का परिदृश्य पूरी तौर से बदल चुका है। जहां दो दशक पहले यह समाचार और विचार के प्रसारण का माध्यम हुआ करता था, आज इसमें 'सत्ता' का आयाम जुड़ चुका है। इसमें 'डिक्टेट' करने, राज्य का एजेंडा निर्धारित करने, सहमति–असमति का निर्माण करने, नीति–निर्णय प्रकिया में हस्तक्षेप करने, नेता–अधिकारियों को हांकने, फिक्सिंग व लॉबिंग करने आदि की क्षमता व शक्ति पैदा हो चुकी है। अब यह निरीह प्रेस या मीडिया या संचार माध्यम भर नहीं रहा है, बल्कि राज्य और लोकतंत्र का भाग्यविधाता मीडियापति या मीडिया शासक स्वयं को समझने लगा हैं। वैश्वीकरण के दौर में मीडिया के चरित्र में यह गुणात्मक बदलाव आया है। कभी महाजनी पूंजी व राष्ट्रीय पूंजी से नियंत्रित व संचालित हुआ करता था। आज कॉरपोरेट और बहुराष्ट्रीय पूंजी इसे हांकती है। अब यह उद्योग है, प्रेस से मीडिया बनने तक की यात्रा का यह आधारभूत परिणाम है।''

भारतीय मीडिया– खासकर समाचार मीडिया में विविधता और बहुलता की मौजूदगी और गतिशीलता की जांच करने के लिये उसपर नियंत्रण स्वामित्व और संकेन्द्रण की छानबीन की जाये। लेकिन इस सवाल का उत्तर खोजने के लिये भारत में मीडिया के विकास– खासकर पिछले दो–तीन दशकों में हुए विकास और विस्तार की बारीकी से जांच–पड़ताल करनी होगी। इसमें कोई संदेह नहीं है कि पिछले दो ढाई दशकों में भारतीय मीडिया उद्योग का जबरदस्त विस्तार हुआ है। दुनिया में बहुत कम देशों में मीडिया व्यवसाय का इतना तेजी से विस्तार हुआ है, जहां ये समझ में आता है कि मीडिया कैसे एक उद्योग के रूप में भारत में कार्य कर रहा है। भारतीय मीडिया को आरंभ से ही वैचारिक, सांस्थानिक, राजनैतिक, आर्थिक और प्रौद्योगिकीय चुनौतियों का सामना करना पड़ा है। आज जबकि वैश्वीकरण का दौर चल रहा है तो मीडिया पर उसका प्रभाव पड़ना लाजमी है। मीडिया का भी वैश्वीकरण हो रहा है। जितना तेजी से मीडिया का स्वरूप बदल रहा है उतना ही तेजी से इसका लक्ष्य भी बदल रहा है। लक्ष्य से बदलना या भटकना ही मीडिया की छवि को धूमिल कर रहा है। राष्ट्र–राज्य और सर्वजन की चिंता करने वाला मीडिया एक उद्योग के रूप में अपना व्यवसाय चला रहा है। ये बदलाव किस तेजी से आया, इसका अनुमान लगाना कठिन है। मीडिया मिशनरी मीडिया से 'प्रोडक्ट' मीडिया बन गया। ये वैश्वीकरण का सबसे भयावह रूप है। मीडिया का कार्य जनता में चेतना पैदा करना है, किंतु आज

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

मीडिया इस से कतराता है।'' दिलीप मंडल ने अपने लेख 'व्यवसाय और सरोकारों का अंतर्विरोध' में लिखा है– "परम्परागत तौर पर हम देखें तो समाचार को लेकर एक पवित्रता बोध का भाव भारत में रहा है। यहां पत्रकारिता को लोकतंत्र का चौथा स्तंभ मानने का चलन रहा है। विचार और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता से इसे जोड़कर देखा जाता रहा है। अंग्रेजी सरकार से टकराव के क्रम में ही भारत में पत्रकारिता की धारा का विकास हुआ। लेकिन आजादी के बाद बहुत सारी चीजों के साथ ही मीडिया की भूमिका भी बदल गयी। सरकार और सत्ता के साथ मीडिया के रिश्तों के बदलने की कहानी तो पुरानी है। जो चीज गौर करने वाली है वो है 1991 के बाद पत्रकारिता के आर्थिक ढांचे और कारोबारी स्वरूप में आया बदलाव। आर्थिक उदारीकरण के बाद मीडिया उद्योग में ढेर सारा पैसा आया। साथ ही नैतिकता, ईमानदारी, प्रतिरोध की संस्कृति जैसे प्रतिमान बदल दिये गये या खत्म हो गये। इसीलिये मीडिया के लिये लोक कल्याणकारी स्वरूप के होने का भ्रम भी टूट गया। मीडिया अब धंधा कर रहा है और खुल कर कर रहा है।''

मीडिया का व्यवसायीकरण इस प्रकार हो गया है कि खबरें खरीदी व बेची जा सकती हैं। उन खबरों में कितनी सच्चाई है, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। खबर से कितना लाभ या हानि हो रहा है, इस बात का कोई महत्व नहीं रह गया है। महत्व मात्र व्यवसाय का रह गया है। मीडिया ही एक मात्र ऐसा माध्यम माना जाता था जो कि लालच और पैसों से दूर है, लेकिन आज मीडिया से बड़ा व्यवसाय कोई नहीं हैं। समाचार पत्र–पत्रिकाएं, टीवी चैनल सभी बिक चुके हैं। मीडिया प्रतिष्ठान अपने मार्ग से इस प्रकार भटक चुके हैं कि वे अब भी जनता की परवाह नहीं करते। दिलीप मंडल ने अपने लेख 'व्यवसाय और सरोकारों का अंतर्विरोध' में लिखा हैं– "पैसा या लाभ देकर खबर तो पहले भी छपती थी लेकिन अब दफ्तरों में बाकायदा खबर बेचने के लिए विभाग खुल गये हैं। आप रसीद कटाकर या चेक से भुगतान करके समाचारों के नाम पर समाचार की शक्ल में अपनी बात छपवा सकते हैं। टाइम्स ऑफ इंडिया के प्रकाशक बैनेट कोलमैन कंपनी ने मीडिया नेट के जरिये इसकी शुरुआत की और अब कई अखबार और चैनल ऐसा करते हैं।" 21वीं सदी का भारतीय मीडिया पूरी तरह औद्योगीकरण की राह पर है। यह पूर्णतः एक उद्योग के रूप में भारत में काम कर रहा है जैसे कोई अन्य उद्योग अपने मुनाफे के लिए कार्य करते है। हद तो यह है कि भारत सरकार भी मीडिया को एक उद्योग के रूप में मान्यता देती है। मीडिया हाउसों के मालिकों की नजर में भी मीडिया एक मोटी कमाई का जरिया है यानी बड़े मुनाफे के साथ मात्र एक उद्योग है। मीडिया के लिये लोक कल्याण, आम आदमी, गरीब, दलित, आदिवासी, अल्पसंख्यक आदि विजातीय शब्द हो गये हैं। सिर्फ मीडिया द्वारा ही अपने कार्यों को नजर अंदाज नहीं किया जाता, बल्कि सरकार की शह पर ही ऐसा होता है क्योंकि जब सरकार ही उसे मुनाफे का बिन्दु मान कर उद्योग के रूप में प्रस्तुत करे तो मीडिया की लोक कल्याणकारी शक्ल तो धुंधली होगी ही। दिलीप मंडल ने लिखा है–"अब तो भारत सरकार मीडिया और मनोरंजन को एक कर के देखती है। वाणिज्य मंत्रालय जब दुनिया को भारतीय उद्योग के बारे में बताता है तो इसके एक अंग के रूप में मीडिया मनोरंजन उद्योग का ब्यौरा देना नहीं भूलता।

1.4 मीडिया का व्यावसायीकरण

पत्रकारिता का उदय समाज में फैली बुराइयों को दूर करने के लिए हुआ था। उसका उद्देश्य समाज के सामने समाज की सच्चाई को रखना था जिसे उसने अपने प्रारंभिक काल में किया भी था। बदलते वक्त के साथ–साथ मीडिया ने भी अपने अस्तित्व को बचाये रखने के लिये बेहद महत्वपूर्ण कदम उठाए। 'मीडिया मिथ और समाज' में रामशरण जोशी ने लिखा है– "आज देश–विदेश के समाचार चैनलों में आठों पहर समाचार प्रसारण और विशेष समाचार दिखाने के लिए अंधी होड़ लगी हुई है। सभी चैनल 'ब्रेक–इन' चिपका कर विशेष समाचार देने या 'स्कूप' मारने का दावा करते हैं। जबकि एक ही खबर को एक ही समय कई चैनल एक साथ दिखा रहे होते हैं। इस तरह की खबर किसी भी स्थिति में 'एक्सक्लूसिव' नहीं हो सकती लेकिन चैनल को चौबीसों घंटे चलाने की विवशता एक ही समाचार की प्रसारण आवृत्ति को बढ़ा डालती है। एक समाचार के बार–बार दोहराव से दर्शकों पर 'अनुकूलन प्रभाव' परोक्ष रूप से पैदा होने लगता है।"

वर्तमान में समाचार माध्यमों से मोह भंग का दौर प्रारंभ हो चुका है। मीडिया पर ही सवाल उठने शुरू हो गये हैं। मीडिया अब नैतिकता के कठघरे में खड़ा किया जाने लगा है। प्रश्न उठने लगे है कि आज मुख्य धारा की मीडिया की संरचना क्या है, उसके द्वारा किसके हित साधे जा रहे हैं और उस पर किसका कब्जा है। प्रभावशाली लोग किस प्रकार बड़ी सफाई से इसका इस्तेमाल कर रहे हैं। आज के समय में कोई खबर पाठकों या दर्शकों तक किस तरह और किस अंदाज में पहुंच रही है इस पर प्रश्न चिह्न लग रहे हैं। सीधे तौर पर अब मीडिया की पहचान स्वार्थी और मुनाफाखोर के तौर पर होने लगी है। मीडिया खबरों को छापने या प्रसारित करने में अपने व्यावसायिक हित देख रहा है और पहले ही यह तय कर लेना चाहता है कि अर्थ की दृष्टि में उसके क्या लाभ हैं। कई बार मीडिया आर्थिक फायदे या मुनाफे के लिए किसी व्यक्ति विशेष या संगठन या किसी कम्पनी को महिमा मंडित करने या प्रतिस्थापित करने में अपने सारे नैतिक मूल्यों को हाशिये पर रखने से नहीं चूकता।

हिंदी मासिक पत्रिका 'समयांतर' के अतिथि सम्पादक भूपेन सिंह ने अपने सम्पादकीय 'नये दौर में मीडिया' में लिखा है– "किसी भी विचार या व्यक्ति के मशहूर होने में मीडिया महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। बड़े औद्योगिक घरानों द्वारा संचालित मीडिया हमेशा प्रभुत्वशाली विचारों को स्थापित करता है। आज की व्यावसायिक मीडिया का ये विस्फोटक विस्तार उसे अराजकता की ओर ले जा रहा है। मालिक और पत्रकार के बीच अंतर बढ़ता जा रहा है। जिसमें मालिक फायदे का हिसाब लगा रहे हैं। और अवसरवादी पत्रकार मजे लूट रहे हैं। जबकि मूल्यवान सक्षम पत्रकार हाशिये पर धकेले जा रहे हैं। ये कॉरपोरेट मीडिया तो पत्रकारों के बीच में ही अंतर पैदा कर रहा है। कुछ को तो लाखों की तनख्वाह और बहुत पत्रकारों को इतना भी नहीं मिल रहा है कि रोजी रोटी चल सके। दरअसल आज का मीडिया जनता के हितों के स्थान पर पूंजीपतियों, बड़े उद्योगपतियों और उनके गलियारे में घूमते दलालों का ही हित साध रहा है। अब समाचार पत्रों और टीवी के समाचार चैनलों को जानबूझ कर मात्र लाभ कमाने की मंशा से शुद्ध व्यावसायिक उद्यमी के रूप में ढाला जा रहा है।"

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

अपने लेख 'कॉरपोरेटिकरण और विश्वसनीयता का ह्रास' में प्रफुल्ल बिद्वई ने लिखा है– ''हाल ही में 'द इंडियन एक्सप्रेस' के सम्पादक ने अपने लेख में ऐसी स्वीकारोक्ति की है जो कि एक्सप्रेस जैसे अखबारों के सम्पादकों में, जोकि आज देश का सबसे ज्यादा दक्षिणपंथी अखबार है, विरले ही दिखाई देती है। वह यह कहते हुए कि आज देश में केवल दो ही समूह ऐसे हैं जो बदलते हुए जमाने को बिलकुल सही पहचान सकते हैं, अपनी बात रखते हैं। एक बॉलीवुड है और दूसरी है राजनीतिक बिरादरी। सम्पादक उन फिल्मों पर चर्चा करते चलते हैं जिन्होंने कि कई तरह से पत्रकारिता का वास्तविक रूप दिखा कर मीडिया का भंडाफोड़ किया। उन्होंने रण और पा जैसी फिल्मों की बात की है। इन दोनों में अमिताभ बच्चन मुख्य भूमिका में है और मीडिया की तीखी आलोचना है। इसके नेता और प्रबंधकों को ऐसे लोगों के रूप में दर्शाया गया है जिनकी एक मात्र रुचि लाभ के रूप टीआरपी या दर्शकों के संख्या के अंकन में है और जिनका सच्चाई के प्रति कोई सम्मान नहीं है। जाहिर है ऐसे समय में जनपक्षीय मूल्य आधारित पत्रकारिता का संदर्भ उपेक्षित हो जाता है और बाजार केन्द्र में आ जाता है।" उन्होंने आगे लिखा है– "राजनीतिक वर्ग भी अपनी विश्वसनीयता खोता जा रहा है। यह स्वयं पर हो रहे आक्रमणों के कारण हिसाब बराबर करने के लिये मीडिया के खिलाफ होता जा रहा है। अंततः वो स्वीकार करते हैं कि मीडिया वास्तव में विश्वसनीयता के गंभीर संकट में है।"

वर्तमान दौर में पावरफुल मीडिया और पावरफुल राजनीतिक वर्ग में टकराहट के संकेत हैं। और दोनों एक–दूसरे के प्रति आकामक रुख रखते हैं। इसका कारण कुछ और नहीं, व्यावसायिकता है। यानी यहां पूंजी ही महत्वपूर्ण है। मीडिया के चलते राजनीतिक वर्ग को पूंजी में घाटा हो सकता है । उनके घोटाले को उजागर कर तो राजनीतिक वर्गों द्वारा नियमों में बांध कर मीडिया के कमाई के जरिये पर लगाम लगाया जा सकता है। जिससे दोनों एक दूसरे के साथ भी नजर आते है और एक दूसरे के विपरीत भी। व्यावसायिकता की इस होड़ में सामान्य गंदी गलियों के सीलन भरे कमरे में घुटते रहते हैं। इस दृष्टि से गरीब या हाशिये के लोगों और मध्य वर्ग की परेशानियों का निवारण नहीं होता है। इस दृष्टि से मीडिया और राजनीति से जुड़े लोगों का नैतिक पतन ही हो रहा है।

आज के समाचार पत्रों और समाचार चैनलों का चरित्र इस प्रकार से बदल गया है कि वे आम समस्याओं को सरकार के सामने रखने के स्थान पर सत्ता के गलियारे में राजनीतिक वर्गं की पहरेदारी करते दिखाई देते हैं। नॉम चॉम्स्की ने 'सरकार के पुछल्ले' नामक लेख में लिखा है– ''यह बड़ा दिलचस्प है कि हमारे प्रतिष्ठित समाचार पत्रों में से लगभग सरकार के एजेंट या सरकार के पुछल्ले बन गये हैं। वे सरकारी नीति का विरोध तो क्या उस पर कोई सवाल भी खड़ा नहीं करते। दरअसल मीडिया का प्रत्येक रूप बाजार केन्द्रित और उपभोग पर आधारित है। अतः यह तो तय है कि मीडिया उपभोक्तावाद से बच नहीं सकता। यही कारण है कि मीडिया का बहुत तेजी से व्यावसायीकरण हुआ है। मीडिया का स्वामित्व औद्योगिक घरानों के या उद्योगपतियों के हाथ में आने से जनतंत्र के विकास के लिये भी बड़ा खतरा पैदा हुआ है। मीडिया अपना व्यावसायिक हित साधने के लिए सरकार और सत्ता के प्रमुख दलों के साथ पूरी सहानुभूति रखता है। यह सत्ता के इशारे पर काम करता है, जिससे उसके व्यावसायिक हितों की पूर्ति हो सके।''

मीडिया की इस मूल्यहीनता और व्यावसायिक गठजोड़ पर टिप्पणी करते हुए वरिष्ठ पत्रकार पी. साईनाथ ने अपने लेख 'झूठ बोलने की संरचनात्मक बाध्यता' में लिखा है– "अलग–अलग मीडिया समूहों की वेबसाइट पर जा कर उनके निदेशक बोर्ड में लिखे नाम देखिए, काफी दिलचस्प होगा। मैकडॉनल्ड्स के प्रमुख, मोबिल ऑयल के बोर्ड सदस्य जैसे नाम मिल जाएंगे। भारत के शीर्ष कॉरपोरेट के प्रमुख किसी न किसी मीडिया समूह के निदेशक बोर्ड में बैठे आपको मिल जाएंगे। यह वाकई 'कॉरपोरेट इनसेस्ट' के भीतर कॉरपोरेट इनसेस्ट है।'' यहां यह बताना आवश्यक है कि कॉरपोरेट इनसेस्ट का अर्थ निकट संबंधियों के बीच व्याभिचार होता है। इन्हीं स्थितियों के कारण मीडिया समाज के चौकीदार की भूमिका अदा करने के बजाए सत्ता और उद्योगपतियों की आज्ञाकारी की भूमिका अदा कर रहा है। बाजारवाद के सबसे बड़े प्रणेता अमेरिका में मीडिया पर पांच बड़े कॉरपोरेशन का स्वामित्व है। यह बिलकुल वैसे ही है जैसे पेट्रोलियम में सात कॉरपोरेशन का स्वामित्व है। मीडिया के लिए इस तरह का केन्द्रियकरण खतरनाक है। मीडिया में केवल चंद नजरिये ही दिखाई देते हैं। जो दिखते हैं वे केवल व्यावासायिक फायदे के लिए। बाजार व्यवस्था में विचार और समाचार निर्णायक नहीं होता। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को बचाए रखना लक्ष्य नहीं होता बल्कि ज्यादा से ज्यादा मुनाफा कैसे कमाया जाए यही लक्ष्य होता है। और उपभोक्ता बाजार का माहौल कैसे बनाए रखा जाए यह भी मीडिया के बुनियादी लक्ष्य होते हैं। इन सारी प्रक्रियाओं में सबसे पहली बलि अभिव्यक्ति की आजादी की चढ़ती है। पैसे का चारों ओर बोल बाला होता है। उसी के आधार पर खबरें चुनी, गढ़ी और लिखी जाती हैं। विश्व के विकासशील देशों या अविकसित देशों में अपने व्यापार को बढ़ाने के लिए पूंजीपतियों या पूंजीपति राष्ट्रों द्वारा एक षड्यंत्र के तहत नवउदारवादी और भूमंडलीकरण जैसे लुभावने शब्दों का प्रयोग कर के इन देशों की जनता को प्रचार एवं मीडिया प्रसार के माध्यम से जिस प्रकार मीडिया द्वारा चुने और गढ़े गए समाचारों को प्रसारित करके उनकी सोच को कुंद किया जाता है उसी प्रकार उन उत्पादनों के उपभोग के लिए मानसिक रूप से उन उत्पादों का गुलाम बनाया जाता है, ताकि उनके उत्पादनों की खपत हो और उनका व्यावसायिक लाभ भी हो जिसमें मीडिया की भी भागीदारी हो।

1.5 मीडिया की विस्तारवादी दृष्टि

भारतीय पत्रकारिता का उद्भव सामाजिक, सांस्कृतिक तथा राजनीतिक चेतना को जगाने के लिए हुआ। बंगाल गजट से लेकर आज तक यह अपने लक्ष्य की ओर अग्रसर है। यह अलग बात है कि आज की मीडिया नवसाम्राज्यवादी संस्कृति को अधिक महत्व दे रहा है। भारत जैसे विशाल और विविधतापूर्ण देश में जहां सभी नागरिक एक–दूसरे से सीधे तौर पर नियमित रूप से नहीं मिल सकते हैं, वहां मीडिया उनके बीच सूचनाओं और परस्पर संवाद का सहज ही एक बेहद जरूरी माध्यम बन गया है। क्योंकि भारत भौगोलिक, क्षेत्रीय, सामाजिक–सांस्कृतिक और भाषायी दृष्टि से विविधताओं से युक्त है। ऐसी स्थिति में मीडिया उद्योग को पनपने या उसके विस्तार की संभावनाएं बहुत ही प्रबल हो जाती हैं।

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

रामशरण जोशी ने अपनी पुस्तक 'मीडिया मिथ और समाज' के 'चालाक और हमलावर मीडिया' शीर्षक लेख में लिखा है– "मीडिया एक दुधारी तलवार है। जहां यह रचनात्मक भूमिका निभाता है वहीं इसमें विध्वंस के तत्व भी अंतर्निहित होते हैं। जहां इसने खाड़ी युद्ध के दौरान युद्ध त्रासदियों की कवरेज से विश्व को हिला दिया था, वहीं इसने युद्ध का सनसनीखेजीकरण किया और कमोडिटी के रूप में अपने दर्शकों को परोसा। अमेरिका क सीएनएन चैनल का युद्ध सूचना मनोरंजकता के लिए हुआ था। युद्ध की कार्रवाई को वीडियो गेम की तरह प्रस्तुत किया गया। यहां तक कि कवरेज में युद्ध को रक्तहीन रूप में दर्शाया गया। 1991 के प्रथम खाड़ी युद्ध के हाईटेक कवरेज के साथ यह सिलसिला शुरु हुआ और आज तक जारी है।

भारत में पत्रकारिता के विस्तार को समझने से पहले इसके महत्व को समझना अति आवश्यक है। इसलिए सबसे पहले इसके ऐतिहासिक पहलू और उसके प्रभाव पर नजर डालना जरूरी है। सन् 1780 में बंगाल गजट का श्रीगणेश जेम्स ऑगस्टस हिकी के द्वारा हुआ। यद्यपि यह साप्ताहिक पत्रिका अंग्रेजी साम्राज्य के अर्न्तगत ही थी लेकिन हिकी को ऐसा प्रतीत हुआ कि पत्रिका को सरकारी नियंत्रण से दूर रखना चाहिए। उसी समय से पत्रकारिता में स्वतंत्रता के भाव उत्पन्न हुए। हालांकि अंग्रेजी शासन पत्रकारिता के प्रभाव को भली भांति जानता था, इसलिए वह पत्रकारिता को स्वतंत्र नहीं करना चाहता था। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद देश में पत्रकारिता के स्वरूप और उद्देश्यों में भी परिवर्तन आया। आजादी से पहले पत्रकारिता का उद्देश्य जहां देश को संगठित करने, राष्ट्रीयता को बचाए रखने एवं लोगों में सामाजिक एवं धार्मिक बुराइयों से लड़ने के लिए था वहीं आजादी के बाद पत्रकारिता का उद्देश्य सरकार की नीतियों, देश के विकास, नौजवानों के लक्ष्य, उद्देश्य एवं कर्तव्यों तथा सामाजिक, आर्थिक विकास को बढ़ावा देना हो गया।

भारत में विस्तारवादी मीडिया का चलन सन् 1997 के मध्य यानी मई में शुरु हुआ जब पहली बार प्रसारण मसौदा लोकसभा के पटल पर रखा गया। इसको शरद पवार की अध्यक्षता में विवादास्पद खंड निजी चैनलों को प्रसारण के अधिकार और विदेशी निवेश की समीक्षा के लिये नियोजित किया गया, जिसे बाद में कुछ शर्तों के साथ पारित कर दिया गया। इससे भारत में सरकारी एवं गैर सरकारी चैनलों के साथ–साथ विदेशी चैनलों के प्रसारण का अधिकार भारत में प्रारम्भ हो गया। इस संदर्भ में केवल जे. कुमार ने लिखा है– "In mid May 1997, the Brodcasting Bill was इस अधिनियम के आधार पर भारत मे समाचार पत्र या न्यूज चैनल में विदेशी पूंजी एक चौथाई ही लग सकती है, जबकि मनोरंजनपरक चैनलों या पत्रिकाओं में विदेशी पूंजी का शत–प्रतिशत निवेश हो सकता है। भारत के मीडिया विस्तार से संबंधित नवउदारवादी दृष्टि से विदेशों की अनेक कम्पनियों ने अपनी पूंजी का निवेश स्वतंत्र रूप से या किसी मीडिया हाउस के साथ भागीदारी के साथ भारत के मीडिया बाजार में किया। इससे भारत में मीडिया का विस्तार तो हुआ ही, साथ ही मीडिया एक उद्योग के रूप में भारत में पनपने लगा।

आनंद प्रधान के अनुसार– ''...समाचार मीडिया में यह इजाजत 26 प्रतिशत विदेशी निवेश तक सीमित है लेकिन मनोरंजन आधारित मीडिया में 100 प्रतिशत तक विदेशी निवेश की इजाजत के कारण मनोरंजन से लेकर समाचार मोडिया में दुनिया की लगभग सभी बड़ी मीडिया कम्पनियां स्वतंत्र रूप से या भारतीय मीडिया कम्पनियों के साथ साझेदारी में या फिर प्रमुख भारतीय मीडिया कम्पनियों में निवेश के जरिये भारतीय बाजार में प्रवेश कर चुकी है। इन कम्पनियों में रूपर्ट मर्डोक की न्यूज कॉरपोरेशन की एशियाई कम्पनी स्टार इंडिया, टाइम वार्नर, वायाकॉम, सीबीसी, सोनी, डिजनी से लेकर सीएनबीसी तक लगभग सभी बड़ी विदेशी मीडिया कम्पनियां भारत में सक्रिय हैं। यह सही है कि इनमें से कुछ को छोड़कर ज्यादातर विदेशी बड़ी मीडिया कम्पनियों की निगाह लगातार फैलते भारतीय मनोरंजन बाजार पर है।' सिर्फ विदेशी मीडिया कम्पनियों ने ही नहीं, बल्कि देश के सरकारी मीडिया दूरदर्शन और इनाडु टीवी जैसी गैर सरकारी मीडिया कम्पनी ने देश की विविधता और भाषायी अंतर एवं संस्कृति को ध्यान में रख कर अपने कई क्षेत्रीय चैनलों को लांच कर के मीडिया का विस्तार किया। यह मीडिया की विस्तारवादी दृष्टि की ही देन है कि भारत जैसे विविधतापूर्ण देश में किसी एक या दो भाषाओं में मीडिया, संचार या मनोरंजन की बाध्यता नहीं रही है। इलेक्ट्रॉनिक मीडिया–टीवी, रेडियो एंव इंटरनेट का क्षेत्रीय भाषाओं में विस्तार के साथ–साथ प्रिंट मीडिया में भी पिछले दशक में एक अभूतपूर्व परिवर्तन यह हुआ कि लगभग सभी बड़े प्रिंट मीडिया हाउस ने भारत में क्षेत्रीय संस्करण निकालना शुरू कर दिया। जबकि पहले राष्ट्रीय या राज्य की राजधानी से ही समाचार पत्रों के संस्करण का प्रकाशन होता था। इस तरह के विस्तार में देशी और विदेशी पूंजीपतियों का समाज के प्रति कोई अच्छा नजरिया नहीं था। उनका सिर्फ निजी स्वार्थ था जिससे उनका प्रसारण संख्या और व्यापार बढ़ सके। मीडिया हाउसों के अपने चरित्र होते हैं। भारत की विविधता को देखते हुए यह विस्तार बहुत ही सहज और स्वीकार्य है।

इस संदर्भ में आनंद प्रधाान ने लिखा है– ''इसमें कोई शक नहीं कि पिछले दो–ढाई दशकों में खासकर नवउदारवादी आर्थिक नीतियों के साथ भारतीय मीडिया उद्योग का जबरदस्त विस्तार हुआ है। दुनिया के बहुत कम देशों में इतने कम समय में मीडिया उद्योग का इतनी तेजी से विस्तार हुआ है। खुद सरकारी और उद्योग जगत के आकलनों के मुताबिक भारतीय मीडिया और मनोरंजन उद्योग की औसत सालाना वृद्धि की दर भारतीय अर्थव्यवस्था की औसत सालाना वृद्धि की दर से लगभग दो गुनी रही। यही नहीं खुद उद्योग जगत के अनुसार आने वाले वर्षों में भी मीडिया और मनोरंजन उद्योग की वृद्धि की रफ्तार दोहरे अंकों में रहेगी। आश्चर्य नहीं कि आज मीडिया और मनोरंजन कारोबार न सिर्फ एक विशालकाय उद्योग में तब्दील हो चुके हैं, बल्कि एक ऐसा आकर्षक उद्योग बन चुके हैं जो अच्छी खासी मात्रा में बड़ी देशी–विदेशी पूंजी भी आकर्षित कर रहा है। असल में पिछले ढाई दशकों में भारतीय मीडिया उद्योग में सबसे बड़ा बदलाव उसके स्वामित्त्व के ढांचे में आया है। उत्तर उदारीकरण दौर पहले इक्का दुक्का बड़े औद्योगिक समूहों को छोड़कर अधिकांश मामलों में जहां वह असंगठित निजी पारिवारिक स्वामित्व वाले लघु और मझोले कारोबार की तरह था वहीं उदारीकरण के बाद बड़ी देशी–विदेशी पूंजी के प्रवेश के साथ वह एक संगठित बड़े और पूरी तरह कॉरपोरेट उद्योग में तब्दील हो चुका है।'' वास्तविकता यह है कि हम सिर्फ वही खबर देखते हैं जो मीडिया हमें दिखाना चाहता है। यह बात प्रिंट मीडिया और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया सहित सभी माध्यमों पर लागू होती है। इसका कारण है मीडिया का व्यावसायिक हो जाना। यह

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

बात भी पूर्ण रूप से सत्य है कि उदारवादी नीति का सबसे ज्यादा प्रभाव मीडिया पर पड़ा। मीडिया बहुत ही तेजी से बदला है। पूंजी और उद्योगवादी नीतियों ने इसमें बहुत ही तेजी के साथ परिवर्तन किया है। हमें पश्चिमी संस्कृति की ओर धकेला जा रहा है। हमारी बंद मानसिकता इसे उदारीकरण मान इस पथ पर आंख मूंद कर चली जा रही है। वास्तव में मीडिया का व्यापारीकरण हो रहा है। इस कारण वह यह सब करने पर विवश है। मीडिया की इस बदलती भूमिका से आम जनता की तुलना में सत्ताधारी वर्ग की क्षमता अधिक बढ़ी है। पूंजीवाद ने समाज को तकनीक के भंवर में फंसा दिया है। आज मीडिया अपनी ही अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के कटघरे में खड़ा दिखाई पड़ता है।

उपसंहार

भारत में पत्रकारिता की शुरुआत अंग्रेजी शासन के समय हुई। उस समय पत्रकारिता का रूप रंग कुछ अलग था। अंग्रेजों के खिलाफ देशवासियों को एकजुट करना तथा अंग्रेजों की नीतियों से समाज को अवगत कराना उसका मुख्य लक्ष्य था। समाज सुधार भी उनके मुख्य लक्ष्य में था। अंग्रेजी शासन के दौर में देश में आधुनिकता का उदय हुआ। आधुनिकता जागृति की वजह से फैली। विसंगतियों, कुरीतियों, आडम्बरों आदि से समाज को मुक्त कराने में पत्रकारिता ने अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया। मीडिया का मुख्य कार्य सूचना देना और लोगों को शिक्षित करना है। अपनी बात को एक ही समय में एक बड़े भू–भाग तक फैलाने में मीडिया सक्षम है। उन्नीसवीं शताब्दी में मीडिया बहुत सीमित साधनों में कार्य करता था। उस दौर के पत्रकारों ने सामाजिक–सांस्कृतिक आंदोलनों का समर्थन किया और भारत की दीन–हीन स्थिति के बारे में लोगों का ध्यान आकृष्ट किया। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद मीडिया का स्वरूप परिवर्तित हुआ। सामाजिक समानता एवं विकास की चुनौतियों से उसका सामना हुआ, जिसका सामना तत्कालीन पत्रकारिता ने किया। लेकिन इस दौर में मीडिया मिशन से प्रोफेशन में बदलने लगी। बीसवीं शताब्दी के अंतिम दशक में भूमंडलीकरण और उदारीकरण के कारण मीडिया का तेजी से विकास हुआ। वह तकनीकी रूप से बहुत सक्षम होता गया। अब मीडिया प्रेस तक सीमित नहीं रहा, बल्कि वह रेडियो से आगे बढ़कर टीवी और इंटरनेट तक विस्तृत हो गया।

मीडिया का व्यावसायीकरण इस प्रकार हो गया है कि खबरें खरीदी व बेची जा सकती हैं। उन खबरों में कितनी सच्चाई है, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। खबर से कितना लाभ या हानि हो रहा है, इस बात का कोई महत्व नहीं रह गया है। महत्व मात्र व्यवसाय का रह गया है। मीडिया ही एक मात्र ऐसा माध्यम माना जाता था जो कि लालच और पैसों से दूर है, लेकिन आज मीडिया से बड़ा व्यवसाय कोई नहीं हैं। समाचार पत्र–पत्रिकाएं, टीवी चैनल सभी बिक चुके हैं। मीडिया प्रतिष्ठान अपने मार्ग से इस प्रकार भटक चुके हैं कि वे इस बात की परवाह नहीं करते कि जनता के सम्मुख किस प्रकार की खबरों का प्रसारण हो रहा है। उन्हें सिर्फ अपने आर्थिक लाभ से मतलब है।

संदर्भ

1. रामशरण जोशी, मीडिया मिशन से बाजारीकरण तक, पृ. 54,
2. नॉम चॉमस्की, वैकल्पिक मीडिया–लोकतंत्र और नॉम चॉमस्की, सं. जगदीश चतुर्वेदी–सुधा सिंह, पृ. 35
3. प्रो. आनन्द कुमार, संवाद और साक्षात्कार, समयांतर, फरवरी 2011. पृ. 103
4. नॉम चॉमस्की, वैकल्पिक मीडिया–लोकतंत्र और नॉम चॉमस्की, सं. जगदीश चतुर्वेदो–सुधा सिंह, पृ. 114
5. दिलीप मंडल, व्यवसाय और सरोकारों का अंतर्विरोध, समायंतर, फरवरी 2011,
6. दिलीप मंडल, व्यवसाय और सरोकारों का अंतर्विरोध, समायंतर, पृ. 22, फरवरी 2011
7. आनंद प्रधान, समाचार उद्योग में बढ़ता संकेंद्रण, समायंतर, पृ. 27, फरवरी 2011
8. दिलीप मंडल, व्यवसाय और सरोकारों का अंतर्विरोध, समायंतर, पृ. 23, फरवरी 2011
9. रामशरण जोशी, असंतोष और असुरक्षा के साए में, समयांतर, फरवरी 2011. पृ. 48
10. आनंद प्रधान, समाचार उद्योग में बढ़ता संकेंद्रण, समायंतर, फरवरी 2011, पृ. 27
11. भूपेन सिंह, नए दौर में मीडिया, समायंतर, पृ. 16, फरवरी 2011
12. प्रफुल्ल बिद्वई, कॉरपोरेटिकरण और विश्वसनीयता का ह्रास, समायंतर, पृ. 37, फरवरी 2011
13. नॉम चॉमस्की, जन माध्यमों का मायालोक, अनु. चंद्रभूषण, पृ. 114
14. पंकज बिष्ट/भूपेन सिंह (संपा.), मीडिया, बाजार और लोकतंत्र, पृ. 66
15. अलका अग्रवाल, भूमंडलीकरणः बाजार और मीडिया सं. जयनारायण बुधवार–प्रमिला बधवार, पृ. 151,
16. आनंद प्रधान, समाचार उद्योग में बढ़ता संकेंद्रण, पृ. 27, समयांतर, फरवरी 2011

© RRIJM 2015, All Rights Reserved